भारतीय विज्ञान जगत की गुमनामी

स्वतंत्रत भारत ने कई वैज्ञानिको को जन्म दिया है, जो आज तक गुमनानी के अंधेरे में जी रहे हैं। कॉस्मॉलॉजी में अमल कुमार राय चैधरी, प्रोटीन क्रिस्टल स्ट्रक्चर में जी.एच.रामचन्द्रन, एवं क्वांटम हेज़ेनबर्ग स्पिन मॉडल का विस्तार करने वाले सी.के.मजूमदार और दीपेन घोष कुछ ऐसे ही भारतीय वैज्ञानिक हैं, जिन्होंने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तो अपनी विद्वता की पहचान बना ली, परन्तु अपनी ही धरती पर उपेक्षित रहे।

विज्ञान और वैज्ञानिकों की ऐसी उपेक्षा भारत के लिए एक गंभीर चुनौती है।

- भारत के पास कई अच्छे वैज्ञानिक संस्थान हैं, जिन्हें पर्याप्त सुविधाएं प्राप्त हैं। परन्तु इनका प्रबंधन ऐसे वैज्ञानिकों के पास है, जो एक प्रकार से नौकरशाह बन चुके हैं। उन्होंने सरकारी कामकाज के तरीके को अपना रखा है। प्रधानमंत्री की वैज्ञानिक सलाहकार परिषद् के प्रमुख सी.एन.आर.राव ने इस पक्ष को स्वीकार करते हुए कहा भी था कि 'देश में नेतृत्व की कमी है। इसके लिए कुछ नए लोगों को आगे लाने की आवश्यकता है।'
- स्वतंत्र भारत में जितने भी राष्ट्रीय विज्ञान प्रतिष्ठान बनें, उनमें निर्णय के आंतरिक मानक स्थापित किए गए हैं। पदासीन वैज्ञानिक ही एक दूसरे के कार्यों का मूल्यांकन कर लेते हैं।

- इन प्रतिष्ठानों के वैज्ञानिक अधिक से अधिक अनुदान प्राप्त करने के लिए राजनीतिज्ञों के यस-मैन बने रहते हैं। वैज्ञानिक उपलब्धियों में इनकी कोई खास रूचि नहीं होती। इस प्रकार की व्यवस्था में उन लोगों को ही बढ़ावा मिलता है, जो चाटुकारिता जानते हैं।
- स्वतंत्र भारत में अनुसंधान एवं शिक्षण को अलग-अलग भागों में बांट दिया गया है। इसके चलते दोनों ही पक्षों को हानि हो रही है।
- भुवनेश्वर भौतिकी संस्थान के वरिष्ठ भौतिकशास्त्री का कहना है कि भारत में विज्ञान से संबंधित अधिकांश कार्य सैद्धांतिक रूप से किया जाता है। अगर आप अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपने काम को ले जाना चाहें, तो सरकार की ओर से आपको कोई सहयोग नहीं मिलता। यही कारण है कि व्यक्तिगत स्तर पर किए जाने वाले प्रयास आगे नहीं बढ़ पाते।
- भारत में प्रायोगिक विज्ञान की स्थिति बहुत खराब है। किसी प्रयोग के सफल होने में दीर्घकालीन अनुदान एवं वैज्ञानिकों के आपसी तालमेल की बहुत आवश्यकता होती है। अनुदान राशि तो राजनीतिज्ञों की कृपा के अधीन होती है। दूसरे, वैज्ञानिकों के बीच आपसी तालमेल का मामला एक सामाजिक सरोकार है। भारतीय संस्थानों में इस प्रकार के तालमेल को बिल्कुल भी प्रोत्साहन नहीं दिया जाता।
- सभी वैज्ञानिक संस्थान समाज पर एक सकारात्मक छाप छोड़ने में असफल रहे हैं। इसका कारण यही है कि इनके पदासीन अधिकारी समाज के हित की नहीं, बल्कि सरकार के हित की भाषा बोलते हैं।

भारत के लिए विज्ञान के क्षेत्र में सामूहिक सोच, वंचित प्रतिभाओं और अन्वेषण को बढ़ावा देना कोई बड़ी बात नही है। दक्षिणी एशियाई देशों में अन्वेषण को प्रोत्साहन देने वाले देश कम ही हैं। इन सबमें भारत के पास सुविधाओं का भंडार है। अभी भी समय है, जब हम अंतरराष्ट्रीय पहचान बना चुके अपने ही वैज्ञानिक नगीनों को पहचानें और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी वैज्ञानिक पहचान को सुदृढ़ करें।

'द हिन्दू' में प्रकाशित अरविन्द राजगोपाल के लेख पर आधारित।